स्वामी विवेकानन्द

Swami Vivekanand

हमारे देश में समय-समय पर परिस्थितियों के अनुसार संतों-महापुरुषों ने जन्म लिया है और अपने देश की दुःखद परिस्थितियों का मोचन करते हुए पूरे विश्व को सुखद संदेश दिया है। इससे हमारे देश की धरती गौरवान्वित और महिमावान हो उठी है। इससे समस्त विश्व में सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ है। देश को प्रतिष्ठा के शिखर पर पहुँचाने वाले महापुरुषों में स्वामी विवेकानंद का नाम सम्पूर्ण मानव जाति के जीवन की सार्थकता का मधुर संदेशवाहकों में से एक है।

स्वामी विवेकानन्द जी का जन्म 12 फरवरी सन् 1363 को महानगर कलकत्ता में हुआ था। स्वामी विवेकानन्द जी के बचपन का नाम नरेन्द्रनाथ था। आप अपने बचपन के दिनों में अत्यन्त नटखट स्वभाव के थे। आपके पिताश्री का नाम विश्वनाथ दत्त तथा माताश्री का नाम भुवनेश्वरी देवी था। बालक नरेन्द्रनाथ को पाँच वर्ष की आयु में अध्ययनार्थ मेट्रोपोलिटन इन्स्टीट्यूट विद्यालय भेजा गया। लेकिन पढ़ाई में अभिरुचि न होने के कारण बालक नरेन्द्रनाथ पूरा समय खेलकुद में बिता देता था। सन् 1879 में नरेन्द्रनाथ को जनरल असेम्बली कालेज में प्रवेश दिलाया गया।

स्वामी जी पर अपने पिताश्री के पश्चिमी सभ्यता और संस्कृति प्रधान विचारों का तो प्रभाव नहीं पड़ा लेकिन माताश्री के भारतीय धार्मिक आचार-विचारों का गहरा प्रभाव अवश्य पड़ा था। यही कारण है कि स्वामी जी अपने जीवन के आरंभिक दिनों से ही धार्मिक प्रवृत्ति में ढलते गए और धर्म के प्रति आश्वस्त होते रहे। ईश्वर-ज्ञान की उत्कंठा-जिज्ञासा में आप बार-बार चिन्तामग्न होते हुए इसमें विरक्त रहे। जय जिज्ञासा का प्रवाह बहुत अधिक उमड़ गया, तो आपने अपने अशान्त मन की शान्ति के लिए तत्कालीन संत-महात्मा रामकृष्ण परमहंस जी की ज्ञान छाया ग्रहण कर ली |परमहंस ने स्वामी जी की योग्यता की परख पलक गिरते ही कर ली। उनसे स्पष्टतः कहा-"तू कोई साधारण मनुष्य नहीं है। ईश्वर ने तुझे समस्त मानव जाति के कल्याण के लिए हो भेजा है।' नरेन्द्रनाथ ने स्वामी रामकृष्ण के इस उत्साहवर्द्धक गंभीर वाणी-दर्शन को सुनकर अपनी भक्ति और श्रद्धा की पूर्ण रूपरेखा

अर्पित करने में अपना पुनीत कर्त्तव्य समझ लिया था। फलतः वे परमहंस जी के परम शिष्य और अनुयायी बन गए।

पिताश्री की मृत्योपरांत घर-गृहस्थी के भार को सम्भालने के बजाय नरेन्द्रनाथ ने संन्यास पथ पर चलने का विचार किया था, लेकिन स्वामी रामकृष्ण परमहंस के इस आदेश का पालन करने में ही अपना कर्त्तव्य-पथ उचित समझ लिया-"नरेन्द्र ! तू स्वार्थी मनुष्यों की तरह केवल अपनी मुक्ति की इच्छा कर रहा है। संसार में लाखों मनुष्य दुःखी हैं। उनका दुःख दूर करने तू नहीं जायेगा तो कौन जायेगा ?" फिर इसके बाद तो नरेन्द्रनाथ ने स्वामी से शिक्षित-दीक्षित होकर यह उपदेश प्राप्त किया कि–'संन्यास का वास्तविक उद्देश्य मुक्त होकर लोक सेवा करना है। अपने ही मोक्ष की चिन्ता करने वाला संन्यासी स्वार्थी होता है। साधारण संन्यासियों की तरह एकान्त में अपना मूल्यवान् जीवन नष्ट न करना। भगवान के दर्शन करने हों तो मनुष्य मात्र की सेवा करना।" नरेन्द्रनाथ ने स्वामी रामकृष्ण परमहंस जी को मृत्यु सन् 1886 में हो जाने के उपरान्त शास्त्रों का विधिवत गंभीर अध्ययन किया पूर्णरूपेण ज्ञानापलब्ध हो जाने के बाद ज्ञानोपदेश और ज्ञान प्रचारार्थ विदेशों का भी परिभ्रमण किया। सन् 1881 में नरेन्द्रनाथ संन्यास ग्रहण करके नरेन्द्र नाथ स्वामी विवेकानन्द बन गए।

31 मई सन् 1883 में अमेरिका के शिकागो शहर में आप धर्म सभा सम्मेलन की घोषणा सुनकर वहाँ पर पहुँच गए। उस धर्म सम्मेलन में भाग लिया और अपनी अद्भुत विवेक क्षमता से सबको चकित कर दिया। 11 सितम्बर सन् 1883 को जब सम्मेलन आरम्भ हुआ और जब सभी धनांचायों और धर्माध्यिक्षों के सामने स्वामी जी ने भाइयो, बहनो, यह कहकर अपनी बात आरम्भ की। तो वहाँ का समस्त वातावरण तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठा। फिर स्वामी जी ने इसके बाद कहना आरम्भ किया–''संसार में एक ही धर्म है और उसका नाम है-मानव धर्म। इसके प्रतिनिधि विश्व में समय-समय रामकृष्ण, क्राइस्ट, रहीम आदि होते रहे हैं। जब ये ईश्वरीय दूत मानव धर्म के संदेशवाहक बनकर विश्व में अवतरित हुए थे, तो आज संसार भिन्न-भिन्न धर्मों में क्यों विभक्त हैं ? धर्म का उद्गम तो प्राणी मात्र की शांति के लिए हुआ है, परन्तु आज चारों ओर अशांति के बादल मंडराते दिखाई पड़ते हैं और ये दिन-प्रतिदन बढ़ते ही जा रहे हैं। अतः विश्व शांति के लिए सभी लोगों को मिलकर मानव-धर्म की स्थापना और उसे दृढ करने का प्रयल करना चाहिए।

इस व्याख्यान से वह धर्म सभा ही विस्मित नहीं हुई थी, अपितु पूरा पश्चिमी विश्व ही अत्यन्त प्रभावित होकर स्वामी जी के धर्मोपदेश का अनुयायी बन गया। इस शान्तिप्रद धर्म संदेश से आज भी अनेक राष्ट्र प्रभावित हैं। यही कारण है कि स्वामी जी को आने वाले समय में कई बार अमेरिका धर्म-संस्थानों ने व्याख्या के लिए सादर आमन्त्रित किया। परिणामस्वरूप वहाँ अनेक स्थानों पर वेदान्त प्रचारार्थ संस्थान भी खुलते गए। न केवल अमेरिका में ही अपितु इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी, जापान आदि देशों में वेदान्त प्रचारार्थ संस्थान बने हैं।

लगातार कई वर्षों तक विदेशों में भारतीय हिन्दू-धर्म का प्रचार करने के बाद भारत आकर स्वामी जी ने कलकत्ता में रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। इसके बाद कई बार हिन्दू धर्म के प्रचारार्थ विदेशों में जाते रहे और भारत में भी इस कार्य को बढाते रहे। अस्वस्थ्यता के कारण ही स्वामी जी 18 जुलाई सन 1902 को रात के 9 बजे चिर-निद्रा देवी की गोद में चले गए। स्वामी जी का यह दिव्य उपदेश अकर्मण्यता को भगाकर पौरुष जगाने वाला है- ”उठो, जागो और अपने लक्ष्य-प्रापि से पहले मत रुको”